दलितों व शोषितों का पाक्षिक पत्र

हमायती

सम्पादक–डॉ0 सोहनपाल सुमनाक्षर

□ वर्ष 63 □ अंक-21 □ दिल्ली □ अगस्त (प्रथम) □ मूल्य : 2 रु.

जयंती विशेष

दलित साहित्य के पुरोधा लोकशायर अण्णाभाऊ साठे

• दीपचंद शेंडे

अन्नाभाऊ का जन्म 1 अगस्त 1920 को सांगली जिले के तालुका वाळवे में वाटेगांव गांव में हुआ। उनके पिता का नाम भाऊ साठे और माता का नाम वालूबाई था। अन्नाभाऊ के पिताजी के पास 54 एकड़ जमीन थी लेकिन साहुकार ने भाऊ साठे से गिरवी में बिक्रीपत्र लिखकर उसे हड़प लिया था। मांग जाति को खेती या ऐसे किसी काम की मनाही थी। उनके जिम्मे गांव की हिफाजत का काम था। इसलिये मांगों के घरों में चमकती तलवारें और गरीबी के दर्शन होते थे। पेट की आग बुझाने के लिए उन्हे मजबूर होकर कभी चोरी–लूटमार करनी पड़ती थी। अंग्रेजों ने मांगों को अपराधी जाति करार देकर उनका जीना हराम किया था। इसलिये अंग्रेजों के खिलाफ उमाजी नाईक, लहुजी सालवे, फकीरा इ. ने बगावत की। वाटगांव के मांग भूख से बिलबिला रहे हैं यह फकीरा से देखा नहीं गया। उन्होंने बेडसगांव में अंग्रेजों का खजाना लूटा। फकीरा उस रात भाऊ साठे से मिलने आया। भाऊ को लड़का हुआ था। फकीरा ने दोनों अंजुली भरकर चांदी के सिक्के देकर कहा कि इस बच्चे को हर हाल में जीवित रखो ये बच्चा अपने समाज का नाम रोशन करेगा। अन्ना को स्कूल में दाखिल किया गया। झगड़े में अन्ना ने एक सवर्ण लडके की पिटाई कर दी। सवर्ण शिक्षक ने अन्नाभाऊ और उसके मित्रों की हथेलियां नीली पड़ते तक छड़ियां मारी। बेकसूर अन्नाभाऊ ने स्कूल बंद कर लौटते सवर्ण शिक्षक की पीठ पर बडा पत्थर दे मारा और सीधे अपने घर पहुंचा। शिक्षक ने अन्ना की शिकायत की। अन्ना की घायल हथेलियां देखकर शिक्षक को ही दोष दिया गया। फकीरा ने शिक्षक को धमकाया। लेकिन इसके बाद अण्णाभाउ ने कभी स्कूल में कदम नही रखा। अन्नाभाऊ का आदर्श फकीरा था। भारत में भी अंग्रेजों के खिलाफ जबर्दस्त आन्दोलन हो रहे थे। अन्नाभाऊ ने क्रांतिसिंह नाना पाटील की बगावत में भाग लिया था। नाना पाटील ज्योतिराव फुले से प्रभावित थे। अन्नाभाऊ साठे ने 16 अगस्त 1947 को मोर्चा निकालकर ''यह आजादी झूठी है, मुल्क की जनता भूखी है'' का नारा लगाते हुए ब्राह्मण–बनियों को मिली हुकुमत का विरोध किया। अन्नाभाऊ ने कहा ''जातीयता की बेड़ियों और गुलामी की जंजीरें तोड़कर फेंकनी चाहिये और उसके बाद ही आजादी देनी चाहिये। लेकिन ऐसा नहीं हुआ है, इसलिये यह आजादी हमारे लिये नहीं, बल्कि ब्राह्मणों ने ब्राह्मणों के लिये मांगी हुई आजादी है। ब्राह्मणों को जुल्म करने का हक देने वाली आजादी हमें नहीं चाहिये। ब्राह्मण–बनियों की आजादी से मूलनिवासियों की गरीबी, अन्याय और जाति व्यवस्था खत्म होने वाली नहीं है। अंग्रेज चले जाने से अब ब्राह्मणवादी शोषकों को किसी का भी डर नहीं बचा है।'' सभी ब्राह्मणवादी बुद्धिजीवी अन्नाभाऊ गये उठाये गये सवालों पर बहस करने से कतरा गए। अन्ना भाऊ ने कम्युनिस्ट पार्टी में अपना 'लालबावटा' कलापथक कायम किया था। तंग करने वाले मच्छरों पर उन्होंने अपला पहला 'पोवाडा' लिखा। 'स्पेन का पोवाडा' लिखकर कम्युनिस्ट पार्टी के प्रचार की जिम्मेदारी उठाई। सन् 1938 में उनके पिता भाऊ साठे की मौत हुई। अन्नाभाऊ साठे ने गोवा मुक्ति–संग्राम में भी भाग लिया। जनजागृति के लिये सारे महाराष्ट्र का दौरा किया। पुना में जयवंतीबाई से उनका रजिस्टर्ड विवाह हुआ और वे बंबई घाटकोपर के चिराग नगर में पत्राचाल में रहने लगे। उन्होंने 'लोकयुद्ध साप्ताहिक' के रिपोर्टर के तौर पर भी काम किया।

कम्युनिस्ट पार्टी ने पार्टी फंड के लिये दो लाख रुपए इकट्ठा करने का लक्ष्य रखा। अन्नाभाऊ ने ''स्तालिनग्रादचा पोवाडा'' लिखा और उसे पार्टी फंड के लिये अर्पण किया। अन्नाभाऊ द्वारा गाए इस पोवाडे का मेहनतकश शोषितों पर जबर्दस्त असर होता था। खुश

(शेष भाग... पृष्ठ 4 पर)

सम्पादकीय

24 सितम्बर–एक ऐतिहासिक दिन

• डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर

24 सितम्बर, 1932 को भारत रत्न बाबा साहब डा. बी. आर. अम्बेडकर और राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के बीच पूना की जेल में एक समझौता हुआ था। जिसके तहत गांधी जी ने अपना आमरण अनशन समाप्त कर दिया था, और बाबा साहब ने 'कम्युनल अवार्ड' वापस ले लिया था। चूंकि यह समझौता पूना में हुआ था, अतः इसे नाम दिया गया 'पूना पैक्ट'। इस समझौते के तहत गांधी जो ने बाबा साहब को वचन दिया था कि वह 10 वर्ष में अस्पृश्यता को मिटाकर अछूत व सवर्णों के बीच ऊंच–नीच की भावना को खत्म कर देंगे, इसके अलावा दलितों को उनकी आबादी के अनुपात में सभी जगहों पर हिस्सेदारी दी जायेगी। इसको रचनात्मक रूप देने के लिए गांधी जी ने 'हरिजन सेवक संघ' की स्थापना की और 'हरिजन' नाम से हिन्दी व अंग्रेजी में दो समाचार पत्र निकालने शुरू किये। सामाजिक स्तर पर भंगी मुक्ति कार्यक्रम और अन्तर्जातीय विवाह भी प्रारम्भ किये। इस तरह गांधी जी ने सवर्ण हिन्दुओं के दिलों में हरिजनों के प्रति नरम भाव पैदा करने की कोशिश की, पर क्या वे सवर्णों का हृदय परिवर्तन करने में कामयाब रहे? क्या बाबा साहब को पूना पैक्ट के तहत दिया अपना वचन पूरा कर सके? आज भी ये विचारणीय प्रश्न ज्यों के त्यों हमारे सामने मुंह बायें खड़े है।

'कम्यूनल अवार्ड' में ऐसा क्या था जो गांधी जी को अपने 'अमोघ अस्त्र' आमरण अनशन की घोषणा करनी पड़ी? 'कम्यूनल अवार्ड' को समझने के लिए हमें इतिहास में थोड़ा पीछे झांकना होगा। अंग्रेजी सरकार ने देश को आजादी पर राय जानने के लिए लन्दन में 1931 में 'राउंड टेबल कान्फ्रेंस' बुलाई थी, उसमें जहां गांधी समेत अन्य भारतीय नेताओं को बुलाया था वहीं दलितों के प्रतिनिधि के रूप में बाबा साहब डा. अम्बेडकर को भी आमंत्रित किया था। बाबा साहब ने बरतानिया सरकार से साफ–साफ कहा कि वह भारत को जरूर आजाद करें, पर उससे पूर्व वह देश की एक चौथाई अछूतों (दलितों) को भी उन लोगों से आजादी दिलाए जिनको वह सत्ता सौंपने जा रही है, क्योंकि जब तक दलित सवर्णों के गुलाम हैं, तब तक देश की आजादी उनके लिए बेमायने है। 'राउन्ड टेबुल कान्फेंस' में बाबा साहब की इस सच्चाई को गांधी जी लाख प्रयत्न करने पर भी झूठला नहीं सके। इस कान्फ्रेंस के परिणाम स्वरूप ही अंग्रेजी हकूमत ने दलितों के उत्थान के लिए 17 अगस्त, 1932 को 'कम्युनल अवार्ड' नाम से एक घोषणा–पत्र जारी किया। इसके तहत दलितों को दो प्रमुख अधिकार दिये गये। पहला दलितों की बहुल आबादी वाले क्षेत्रों में उनके लिए 'आरक्षित क्षेत्र' बनाने का विधान था, दूससे प्रावधान में दलितों को दो वोट देने का अधिकार था। एक वोट अपने पसन्द के सवर्ण प्रतिनिधियों को चुनने के लिए था और दूसरे वोट से आरक्षित क्षेत्र से 'दलित प्रतिनिधि' को। सत्ता में उचित भागीदारी के लिए दलितों को 'कम्युनल अवार्ड' में यह अधिकार दिये गये थे। इससे निश्चित रूप से सवर्णों को दलितों वोटों का महत्व का अहसास होता और वे उसी के लालच में उन्हें उचित तरजीह देना शुरू करते, वहीं दलितों में से भी उनके अच्छे प्रतिनिधि चुनकर विधान सभा सा संसद जाते जो उनके विकास, कल्याण और उन्नति को बात सोचते। दलितों को स्थिति में राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक स्तर पर इससे काफी बदलाव आता। और शायद दलितों की दशा और स्तर आज वह नहीं होता, जो है।

गांधी जो को कम्युनल अवार्ड में ऐसा क्या नजर आया कि वह घोषणा कर बैठे कि जब तक इसे वापिस नहीं लिया जायेगा, अन्न–जल ग्रहण नहीं करेंगे, आज भी हमारी समझ से परे है। मुस्लिम, सिख, ईसाई सभी के लिए अंग्रेजी सरकार ने सहूलियतों की घोषणा की, पर कभी भी गांधी जी ने उनका विरोध नहीं किया, फिर अछूतों को दी गई सुविधाओं के मामले

(शेष भाग... पृष्ठ 3 पर)

भारतीय दलित साहित्य अकादमी के प्रकाशन

विश्व धरातल पर दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अंधा समाज और बहरे लोग	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
सिन्धु घाटी बोल उठी	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अब नहीं रहेंगे हाशिये पर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर शतक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
विश्व विभूति डा. अम्बेडकर	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
दलित लेखक परिचय ग्रंथ (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	250/–
बुद्धा दू अम्बेडकर (अंग्रेजी)	डॉ. सुमनाक्षर	150/–
दलित साहित्य	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
अम्बेडकर दर्शन	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
हमारे संत और समाज सुधारक	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
धर्म और समाज	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
आदिम जाति चमार (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	300/–
दलित उद्घोष	डा. सुमनाक्षर	100/–
दलित साहित्य की हुंकार–सात समन्दर पार	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
युगपुरुष बाबू जगजीवनराम	डॉ. सुमनाक्षर	200/–
प्राचीन आदिम जाति वाल्मीकि (इतिहास, धर्म, संस्कृति)	डॉ. सुमनाक्षर	100/–
मेरे साक्षात्कार–मेरा जीवन संघर्ष	डा. सुमनाक्षर	300/–
सभ्यता, संस्कृति, समाज और साहित्य	आचार्य गुरुप्रसाद	100/–
भारत रत्न डा. बी.आर. अम्बेडकर	राजमल 'राज'	100/–
मूल भारती से दलित	राजमल 'राज'	100/–
अम्बेडकरवाद बनाम सामाजिक परिवर्तन	राजमल 'राज'	100/–
दलित साहित्य–दशा और दिशा	डा. माता प्रसाद	200/–
दलित साहित्य से सामाजिक परिवर्तन	डा. माता प्रसाद	100/–
भारत की गुलामी के 22 सौ साल	प्रदीप कुमार मौर्य	250/–
बौद्ध धर्म–गया से अयोध्या तक	प्रदीप कुमार मौर्य	120/–
गांधी, अम्बेडकर और दलित	प्रदीप कुमार मौर्य	100/–
हम एक हैं	डा. माता प्रसाद	100/–
रैदास से संत शिरोमणि गुरु रविदास	डा. माता प्रसाद	100/–
ताकि सनद रहे	डा. सुमनाक्षर	200/–
Who's who Dalit Writers in India	Dr. Sumanakshar	500/-
Who's Who–International & National Awardees of B.D.S.A.	Dr. Sumanakshar	500/-

पुस्तक मंगाने के लिए अग्रिम राशि निम्नलिखित अकादमी के खाते में भेजें

Bharatiya Dalit Sahitya Akademi

A/c No. - 2592101012292 (Canara Bank)

IFSC - CNRB0002592

Branch - Model Town, Delhi

सम्पादकीय का शेष....24 सितम्बर-एक ऐतिहासिक दिन

में ही वे 'जिद्दी' क्यों हो गये?

गांधी जी सनातन हिन्दू थे। चतुर्थ वर्ण में अछूतों के होने के कारण वे इन्हें भी हिन्दू का अंग मानते थे। हमें लगता है कि 'कम्युनल अवार्ड' से दलितों को मिलने वाले दो वोटों के अधिकार से उन्हें हिंदुओं से अलग होने का खतरा नजर आ रहा था, दूसरी तरफ वह अछूतों को एकदम दो वोटों की ताकत देने के लिए तैयार नहीं थे, तीसरे हिंदुओं के आजीवन गुलाम 'हरिजन' अंग्रेजों से कोई सहूलियत सीधे क्यों लें। कोई सहूलियत लेनी है तो उसे वह स्वयं देंगे। चौथा, 'कम्युनल अवार्ड' से प्राप्त अधिकार बाबा साहब डा. अम्बेडकर का 'राउन्ड टेबुल कान्फेंस' का परिणाम या, और इसका श्रेय सीधा डा. अम्बेडकर को जाता था। गांधी जी इसका सारा श्रेय डा. अम्बेडकर को देकर उन्हें दलितों का 'नेता' नहीं बनाना चाहते थे। पांचवां, संसद या विधान सभा में दलितों के नुमायंदे जब उनकी पसन्द से ही चुने जायेंगे, तो फिर सवर्णों की 'चौदराहट' को कौन पूछेगा? इसी लिए गांधी जी किसी भी कीमत पर इस 'कम्युनल अवार्ड' को लागू करने के इच्छुक नहीं थे। इस पर अमल को रोकने के लिए उन्होंने 'आमरण अनशन' की घोषणा कर दी। गांधी जी के इस छलावे और हिन्दू नेताओं के घटिया प्रचार के दबाव में बाबा साहब को आखिर में झुक कर 'कम्युनल अवार्ड' को रुकवाना पड़ा। पर क्या 'पूना–पैक्ट' के समझौते को गांधी जी या उनके अनुयायी अभी तक पूरा कर पाये हैं?•

पृष्ठ 1 का शेष भाग...दलित साहित्य के पुरोधा लोकशायर अण्णाभाऊ साठे

होकर वे पैसे लूटाते थे। चंद दिनों में ही अन्नाभाऊ ने पार्टी को दो लाख रुपयों का फंड इकट्ठा कर दिया। अन्नाभाऊ के इस पोवाडे की शोहरत बर्लिन तक पहुंच गई। अन्नाभाऊ की किताबों के रशियन, चेक, पोलैंड, जर्मनी भाषाओं में अनुवाद हुए। वे इन मुल्कों में दलित शोषितों के साहित्यकार के रुप जाने जाने लगे। उन्हें विदेशों से लगातार निमंत्रण आते रहे, लेकिन (ब्राह्मणवादी) सरकार उन्हें पासपोर्ट देने में नकारती रही। मुख्यमंत्री ने कहा कि तुम जेल में नहीं हो, यही खुशकिस्मती समझो। सन् 1948 में उन्हें विश्व साहित्य परिषद का निमंत्रण मिला। पासपोर्ट के पैसे सिने कलाकार बलराज सहानी ने भर दिये, लेकिन महाराष्ट्र की (ब्राह्मणवादी) सरकार ने उन्हें पैरिस जाने की इजाजत नहीं दी।

डॉ. अम्बेडकर ने शाहीर जमात में जागरुकता लाने का काम किया था। सन् 1927 में जब डॉ. अम्बेडकर ने दलितों के धर्मांतरण के इरादे का ऐलान किया तो शाहीरों ने ही उनके पैगाम को दलितों की झोपड़ियों तक पहुंचाया था। मांगरुलकर, तातुबा, गणू नेर्लेकर, पेठकर, बाबाजी मलवणकर, नाना गिरजकर, अप्पा, यलप्पा, कराडकर, गुंडया इत्यादि शाहीरों के नामों को अबतक दलित समाज नहीं भूला है। लेकिन ब्राह्मणवादियों ने सबको नजरंदाज कर दिया।

शाहीरों ने डॉ. अम्बेडकर के इन्केलाब की धार को और भी तेज कर दिया। सोलापूर में आयोजित मातंग परिषद के अध्यक्षीय भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि 'मातंग समाज यह मेरा अपना समाज है। मातंग समाज के जो दुख हैं, वे मेरे अपने दुख हैं। मैं अपनी सारी ताकत से आप पर होने वाले अन्याय और अत्याचारों को खत्म करने की कोशिश करूंगा।'

सन् 1956 में सरकार ने अन्नाभाऊ के लालबावटा कलापथक पर पाबंदी लगा दी। उनके पोवाडे और क्रांतिगीतों के असर से घबराकर मुंबई सरकार ने उन पर पाबंदी लगा दी। सरकार ने तमाशाओं पर भी पाबंदी लगा दी। तमाशा कर अपना पेट पालने वालों के सामने भुखमरी की हालत पैदा हुई। सरकार से सारी बातचीत बेकार गई तब अन्ना भाऊ साठे ने तमाशाओं का लोकनाट्यों में रूपांतर किया। 'लोकनाट्य' शब्द की वजह से सरकार को उसपर पाबन्दी लगाना मुमकिन नहीं रहा। क्योंकि तब उन्हें ब्राह्मणों के नाट्यमंडलों पर भी पाबंदी लगानी पड़ती।

डॉ. अम्बेडकर का महापरिनिर्वाण हुआ तो अन्नाभाऊ ने शोषितों से कहा–''जग बदल घालूनी घाव, सांगुनी गेले मला भीमराव। गुलामगिरिच्या या चिखलात, रुतूनी बसला का ऐरावत? अंग झाडूनी नीघ बाहेरी, घे बिनीवरती धाव।। (अपने प्रहार से दुनिया को बदल डालो ऐसा भीमराव मुझसे कह गए हैं। हाथी जैसी ताकत होकर भी गुलामी के कीचड़ में क्यों फंसे हुए हो? जिस्म को झटककर बाहर निकलो और आगे टूट पड़ो।)

अनाभाऊ साठे ने 1 मार्च, 1958 के प्रबुद्ध भारत के अंक में 'दलितों की शाहीरी' इस लेख में अन्नाभाऊ ने कहा कि नए शाहीर और उनकी शाहीरी का भविष्य उज्ज्वल है क्योंकि जिस दलित समाज से डॉ. अम्बेडकर आए उसी दलित समाज से शाहीर आए हैं, इसलिये उनकी शाहीरी अमर है। ये दलित शाहीर अपने अवाम के लिये पूरी तरह से ईमानदार हैं। अन्नाभाऊ ने ऐलान किया कि ''यह दुनियां शेष नाग के माथे पर नहीं बल्कि दलितों की हथेली पर खड़ी है।''

8 जून, 1958 में सिद्धार्थ कॉमर्स कॉलेज फोर्ट, मुंबई में 'महाराष्ट्र दलित साहित्य संघ' की नाटयशाखा की ओर से अन्नाभाऊ के 'इनामदार' नाटक का उद्घाटन समारोह था। अन्नाभाऊ ने इस नाटक को अम्बेडकरवादी कलावंतों को सुपुर्द किया। सारे महाराष्ट्र के शोषितों ने अन्नाभाऊ को अपने गले लगाया। उनके कार्यक्रमों को बेशुमार शोषित अवाम इकट्ठा होता था। उनके विनोद पर हंसी के फौवारे छूटते थे। कार्यक्रम खत्म होने के बाद लोग उन्हें घेर लेते थे। अन्नाभाऊ ने 1 मार्च, 1959 को अपनी मशहूर किताब फकीरा डॉ. अम्बेडकर को समर्पित की। सन् 1961 में महाराष्ट्र सरकार को मजबूर होकर अन्नाभाऊ की 'फकीरा' को पुरस्कृत करना पड़ा। इंडो–सोवियत कल्चरल सोसायटी की ओर से उन्हें सोवियत संघ बुलाया गया, लेकिन महाराष्ट्र की ब्राह्मणवादी सरकार ने फिर से अडंगे डाले। लेकिन अवाम के जबर्दस्त दबाव के चलते आखिर महाराष्ट्र सरकार ने उन्हें पासपोर्ट जारी किया।

अन्ना भाऊ की मेज पर रूसी जनवादी लेखक मैक्सिम गोर्की की मूर्ति थी। अन्ना भाऊ ने विशाल जन साहित्य का सृजन किया। वर्ना की घाटी में, चित्रा, फकीर,

मास्टर, वर्ना का बाघ, अग्निदिव्य, चंदन, चिखलातिल कमल, फूलपखरू, टीला लावटे मि रक्ताचा, (पसंदीदा) वैय्याजंता, रत्ना, अलगुज, रंगंगा, संघर्ष, अहार, रूपा, त्रावा, गुलाम, मयूरा, मूर्ति, मकादिचा माला, वैर, डोले मोदित राधा चले, रणबोला, कुरुप, बाजार, केवड्याच कनीस, तारा, आग, धुंध, मंगला, मास्टर, मथुरा, मूर्ति, सरनौबत आदि उनके उपन्यास हैं। अन्ना भाऊ ने लगभग 300 कहानियां लिखीं। आबी, कृष्ण काठ, खुलमवाड़ी, गजाद, नवाती, निखारा, कुचला हुआ आदमी, फरारी, बरबाद्या कंजारी, भानामति, लाडी चिरागनगर का भूत, खिलामल, जीवित कारतूस, अंकित बंदूकें, नवाती, निखारा, भूत माला, रणवेली, राम–रावण युद्ध, दावन्नी कैदी, सतारी कारतूस, भोमक्या और दीगर की कहानियां प्रसिद्ध हुईं। उन्होंने कई कविताएं लिखीं। नानकिन शहर से पहले, स्टेलिनग्राद का पोवाड़ा, बर्लिन का पोवाड़ा, बंगाल का हांक, पंजाब दिल्ली दंगा, तेलंगाना की लड़ाई, महाराष्ट्रीयन परंपरा, अमलनेर शहीद, मुंबई के कार्यकर्ता, कलया बाजार पोवाड़ा आदि कई पोवाडे बहुत प्रसिद्ध हुए। अन्ना भाऊ ने कई लोकप्रिय लोक नाटक लिखे। पेंग्याच लागिन, बिलंदर बुडवे, चुने हुए घोटाले, सूखे में तेरहवीं, अक्लेची कहानी, खपुर्या चोर, देशभक्त घोटाले, शेठजीच चुनाव, अवैध, मेरी मुंबई, मौन जुलूस, लोक मंत्री यात्रा, पुढारी गोट, लोक मंत्री, आदि लोक रंगमंच बहुत लोकप्रिय हुए। इनामदार, पेंग्याच लागिन उनका नाटक है और 'मेरी रूस यात्रा' उनका सफरनामा है। 'शाहीर' उनका शाहिरी साहित्य है। अन्ना भाऊ ने ढाई सौ गीत लिखे। खेती गीत, छक्कड़, गौहानी, गण वदंड गीत, चक्कर, लावणी, आदि गीत उनके गीतों में शामिल हैं। मुंबई का रोपण, मेरी मैना, मध्यस्थ का रोपण, मुझे भीमराव से कहा गया था, पहले मुझे पुजी को अपना सम्मान देना चाहिए, आदि उनके गीत श्रमिक दलित–शोषित समुदाय के बीच बेहद लोकप्रिय हुए। सतारा (अलगुज) की ऐसी पतली है, मैं टीले पर खून (आवड़ी) लगा रहा हूं। डोंगरची मैना (बंदर का घोंसला), फकीर मुरली मल्हारी रायची (कीचड़ का कमल)। वारणेचा वाघ, बड़ा गांवचे पानी (वैयाजता) उनकी फिल्मी कहानियां हैं। अन्नाभाऊ के साहित्य का रूसी, चेक, पोलिश, अंग्रेजी, फ्रेंच आदि दुनिया की 27 भाषाओं में अनुवाद हो चुका है। इसके अलावा हिंदी, गुजराती, बंगाली, तमिल, मलयाली, उड़िया जैसी भारतीय भाषाओं में भी अनुवाद हो चुका है। अन्ना भाऊ की कहानी 'कोंबडी चोर' (मुर्गी चोर) का नायक रामू कहता है मुझे रहने के लिये घर नहीं है, खाने के लिये रोटी नहीं है तो मैं चोरी नहीं करूं तो क्या भीख मांगूं? साहब मैं भीख तो कतई नहीं मांगूंगा। इस रामू को एक सवर्ण शिक्षक भारत को मिली आजादी की अहमियत बताता है और उसे चाय पिलाने एक होटल ले जाता है। उसे अछूतों के लिये रखी गई मैली कुचौली टूटी कप प्लेट में चाय दी जाती है। जबकि सवर्ण शिक्षक को अच्छे साफ सुथरे कप प्लेट में चाय दी जाती है। रामू चिढ़कर शिक्षक से कहता है कि इन दो कप प्लेटों में से किसे आजादी मिली है जरा बताईये तो? सवर्ण शिक्षक कुछ न कहते हुए चुपचाप चला जाता है। अन्नाभाऊ साठे ने ऐसी ही कहानियों से दलितों शोषितों के जज्बातों को जुबान दी है।

अन्ना भाऊ जैसे जैसे मशहूर होते गए उन्हें नए नए दोस्त मिले। शंकर, जन्द्र, कैफी आजमी, नर्गिस दत्त, बलराज सहानी, डेविड, नाना पलशिकर, गुरुदत्त, राज कपूर, ए. के. हंगल, के.ए. अब्बास, उत्पल दत्त इत्यादि फिल्मी फनकार उनके दोस्त थे। मराठी सिने जगत में तो वे सबसे मशहूर थे। अन्ना भाऊ की कुल 12 कहानियों पर फिल्में बनीं और बेहद लोकप्रिय हुईं। दिगर लोगों को तो भारी कमाई हुई लेकिन अन्ना भाऊ कफल्लक के कफल्लक रहे।

फिल्म कार्पोरेशन से ढाई लाख रुपयों का कर्ज लेकर 'फकीरा' फिल्म बनाई गई। सन् 1910 में अंग्रेजों के खिलाफ बगावत करने वाले फकीरा के मांग समाज के अहसासों को न समझने से हैरान दिग्दर्शक को अन्नाभाऊ ने फिल्म के हर पहलू में मदद की। अन्नाभाऊ ने फिल्म की पटकथा लिखी, दिग्दर्शन भी किया, साथ ही सावळया का किरदार भी खुद ही निभाया। फिल्म निर्माता के सामने सवाल पैदा हुआ कि हर जगह अन्नाभाऊ का नाम देना पड़ेगा। अन्ना के मित्रों ने उनसे कहा कि यह सब आपने किया यह सच है लेकिन इश्तेहार के लिये सिनेजगत के जानेमाने नाम डालना बेहतर होगा। अन्नाभाऊ ने मंजूरी दी और पटकथा के. अब्बास ने लिखी और दिग्दर्शन कुमार चंद्रशेखर ने किया ऐसे इश्तेहार देना तय हुआ। क्या इससे दलितों की कुव्वत पर प्रश्नचिन्ह लगाने की ब्राह्मणवादी प्रवृत्ति नंगी नहीं होती?

ब्राह्मणवादी कम्युनिस्ट नुमाईन्दगी ने अन्नाभाऊ साठे जैसी बेमिसाल दलित प्रतिभाओं को अपने मतलब के लिये पूरा निचोड़कर मिटा देने में कोई कसर नहीं रखी।

'सावळया' के किरदार में अन्नाभाऊ का नाम दिया गया। यह फिल्म भारी भीड़ में चलने लगी लेकिन उन्होंने अन्नाभाऊ से बेईमानी की। फायनांस कार्पोरेशन से लिये ढाई लाख रुपयों के अलावा सारा फायदा भी आपस में बांट लिया लेकिन अन्नाभाऊ को इसकी खबर तक नहीं होने दी। उन्होंने अन्नाभाऊ से कहा कि फिल्म जैसी चलनी चाहिये थी वैसी नहीं चल रही है, इसलिये यह फिल्म, फिल्म कार्पोरेशन को ही सौंप देनी चाहिये इससे हम लिए गए कर्जे से आजाद हो जाएंगे। अन्नाभाऊ ने उन्हें चाहे जो करने की इजाजत दी। जब इस फिल्म को भारी मुनाफा होने की बात उन्हें पता चली तो उनके दिल को गहरी चोट पहुंची। ब्राह्मणवादी कम्युनिस्ट नेताओं ने अपनी निंदा–आलोचनाओं से अन्नाभाऊ को इतनी बुरी तरह से जकड़ दिया कि आखिर अन्नाभाऊ का पारिवारिक जीवन भी खत्म होने लगा। अन्नाभाऊ की शोहरत इनके दिलों में कांटा बनकर चुभने से उनके कलापथक में विवाद भड़क उठे। इन्होंने अपने अलग कलापथक बनाए। शाहीर अमरशेख (ब्राह्मण) ने भी अपना अलग कलापथक शुरू किया।

अपने साथ की गई गद्दारी से दुखी होकर अन्नाभाऊ ने कलापथक से हमेशा के लिये संबंध तोड़ दिया।

अन्नाभाऊ ने अपनी बेटी को गव्हानकर के कलापथक में भेजने से इन्कार कर दिया। उनकी यह बेटी जयवंताबाई के पहले पति से थी जिसे उन्होंने छोटे से बड़ा किया था। कलापथक के लोगों ने जयवंताबाई को तैयार कर लिया कि वह अपनी बेटी को कलापथक में भेजे।

अन्नाभाऊ को चुप करने के लिये उन्होंने एस.ए. डांगे की अन्नाभाऊ को लिखी चिट्ठी पेश कर दी। इसमें लिखा था कि आपकी बेटी की कलापथक में जरूरत है उसे भेज दिया जाये बाद में आपका क्या कहना है उस पर गौर किया जाएगा। अन्ना ने चिट्ठी पढ़ी। इसी बात पर दोनों में विवाद पैदा हुआ और उस दिन जयवंताबाई अन्नाभाऊ को हमेशा के लिये छोड़ कर चली गई। अन्नाभाऊ ने उसे समझाने की हर तरह से कोशिश की लेकिन वह वापस नहीं आई। बीस सालों का रिश्ता इतनी आसानी से तोड़ दिया गया। अन्नाभाऊ जो शराब के जबर्दस्त विरोधी थे, जिनके घर के आगे से शराबी जाते हुए डरते थे वही अन्नाभाऊ शराब के शिकार होकर मौत की ओर बढ़ने लगे। अन्नाभाऊ ने अपने भाई शंकर के पूछने पर उन्होंने बताया था कि मैं शराब नहीं पीता था, लोगों ने ही मुझे शराब पिलाई और मेरी जेबे काटी। मैं शिकायत नहीं कर सकता था। दूर किसलिये खुद मेरे घर के लोगों ने मुझसे कहा कि महान लेखक शराब पीते हैं इसलिये आपने दारु पीनी शुरु की तो क्या बिगड़ा?

इसे भी सिर्फ संयोग नहीं कहा जाएगा कि अन्नाभाऊ जैसी महान प्रतिभा का पारिवारिक जीवन तबाह करने में डांगे जैसे ब्राह्मण कम्युनिस्ट नेता की चिट्ठी जिम्मेदार रही है। डांगे ने जयवंताबाई को अन्नाभाऊ के पास भेजने के लिये अपने असर का इस्तेमाल क्यों नहीं किया यह भी सबसे बड़ा सवाल है।

अन्नाभाऊ अपना दुख रोते हुए बताते थे कि उनको धोखे, गद्दारी से उन्हें लूटा गया है, उन्हें बर्बाद किया गया है। मैं अब बड़ी बुरी हालत में पहुंच गया हूं। जब भी उन्हें की गई गद्दारी की याद आती वे रोने लगते। वे लगातार बीमार पड़ने लगे। इन्सान को उसके मुश्किल समय में अगर प्यार और हमदर्दी के दो लफ्ज मिल जाएं तो वह मौत के मुंह से भी खुद को बचा लेता है। लेकिन अन्नाभाऊ को हमदर्दी देने के लिये करीब का कोई नहीं था। उन्हें बर्बाद देखकर सारे रिश्तेदार तक कन्नी काटकर उनसे दूर चले गए थे। दिगर लोग उन्हें इलाज के लिये कहते तो वे मना कर देते। उनका इन्सानों पर से भरोसा लगभग उठ सा गया था। अन्नाभाऊ की सारी मित्रमंडली सुशिक्षित थी जबकि अन्नाभाऊ उनमें इकलौते अशिक्षित थे। अपने बचपन से पत्थर तोड़ने, हमाली से लेकर मेहनत के हर काम करने वाले ऐसे अशिक्षित इन्सान ने दलित शोषितों के जीवन की इतनी बड़ी साहित्यिक दुनियां पैदा की, सरकार (पर काबिज ब्राह्मणवादियों) को उनकी किताबों को पुरस्कार देकर गौरव करने के लिये मजबूर होना, विदेशों में उनकी शोहरत होना, उनकी किताबों का दुनिया की 27 भाषाओं में अनुवाद होकर छपना, उनकी कथाओं पर एक नही सात–सात फिल्में बनना, कथाकार, कादंबरीकार अभिनेता ही नहीं बल्कि लोकशाहीर और गीतकार भी होना यह सब उनकी ब्राह्मणवादी मानसिकता को कैसे सहन हो सकता था? इसलिये अन्नाभाऊ की अतिविशाल प्रतिमा की ऊंचाई और तेज सहन न होकर क्या उन्होंने अन्नाभाऊ को जीवन से उठा देने की साजिस न रची होगी?

सन् 1968 में अन्नाभाऊ ने खुद को शराब के हवाले कर दिया फिर भी उन्होंने लिखना बंद नहीं किया। वे जनून में लिखते रहे लेकिन हालातों से मजबूर होकर अपनी कृतियों को शराब के एक गिलास की खातिर बेचते रहे। अन्नाभाऊ को अपनी एक मशहूर उपन्यास एक प्रकाशक को सिर्फ 200 रुपयों में बेचनी पड़ी जिसमें से उन्हें सौ रुपये नगदी दिए थे, उसमें से भी 25 रुपये उसी वक्त उन दोनों के खाने पर खर्च हुए थे।

उनके अंतिम समय में महाराष्ट्र सरकार के समाजकल्याण विभाग ने उन्हें एक फ्लैट और 350 रु महिने मानधन मंजूर किया। अन्नाभाऊ की जीते जी ही उनके रिश्तेदारों ने उस फ्लैट को गिरवी रखकर सारे पैसे उड़ा डाले। दिगर मित्रों के अलावा उनके रिश्तेदारों ने उन्हें लगभग खत्म कर दिया। एक बार सिने अभिनेता बलराज साहनी ने हताश अन्नाभाऊ को उनके गांव वाटेगाव में अपनी कार से छोड़ा।

उनके खाने की कहीं कोई व्यवस्था नहीं थी। खाना खाईए कहने तक को कोई नहीं था।

अन्नाभाऊ को महाराष्ट्र सरकार के समाज कल्याण विभाग से जो मानधन मिलता था। पैसे हाथ आते ही उसके रिश्तेदार और दोस्त इकट्ठा हो जाते थे। पार्टी होती थी। पार्टी को रंग चढ़ गया कि उनकी जेब के सारे पैसे लेकर वे खिसक जाते थे। अन्नाभाऊ सुबह जागकर जब अपनी जेबें देखते तो उन्हें एक नया पैसा भी नजर नहीं आता था। जब भूख का दर्द असहनीय हो जाता तो वे मिट्टी तक उठाकर खा लेते थे। एक बार जब राजा साठे और शिवाजी साठे अन्ना से मिलने आये तब अन्ना ने रोते हुए कहा कि अब उन्हें भूख की तकलीफ सहन नहीं होती. कितने दिन भूखा रहूं? अरे कोई तो मुझे जीलाओ रे। उनकी इस पुकार से उनके दिल पानी–पानी हो उठे। उन्होंने अन्ना को एक भोजनालय में ले जाकर खाना खिलाया और अन्ना के रोज के खाने के लिये भोजनालय के मालिक को 100 रुपये दिए।

राजा साठे ने अन्ना से प्रस्ताव किया कि अबतक अन्ना को उनके प्रकाशकों ने धोखा दिया है लेकिन अब वह खुद उनकी किताब को छापेगा। अन्नाभाऊ ने चार दिनों में किताब लिख देने का वादा कर उसे हैरानी में डाल दिया। दो दिनों में आधी से ज्यादा किताब लिखी लेकिन न जाने क्या सोचकर फाड़ दी। अन्ना ने दोबारा उसे लिखना शुरु किया और चौदह अध्याय और 156 पन्नों की किताब सिर्फ चार दिनों में पूरी की।

अन्नाभाऊ साठे की 18 जुलाई 1969 को मौत हुई। मरने से एक दिन पहले वे अपने दोस्त समाज कल्याण मंत्री भारस्कर से मिले थे और अपना 300 रुपयों का मानधन

लेकर आये थे। भारस्कर को अण्णा की मौत से बेहद दुख हुआ। वे फौरन अण्णा को देखने आए और अण्णा के अंतिम सस्कार के लिये 300 रुपये देकर अपने सरकारी कार्यक्रम के लिये चले गए। इसके बाद अण्णा की अंतिम यात्रा के लिये नाममात्र के लोग और रिश्तेदार इकट्ठा हुए। किसी ने कहा कि भारस्कर साहब ने अण्णा के अंतिम संस्कार के लिये 300 रुपये दिए हैं। लेकिन कोई यह बताने के लिये आगे नहीं आया कि रुपये मुझे दिए हैं। आपस में चंदा कर गोरेगांव के श्मशानभूमि तक अंतयात्रा निकाली गई।

डॉ. प्रकाश खरात के मुताबिक अन्नाभाऊ साठे इतने महान साहित्यिक होने के बावजूद ''मराठी कादंबरी चे पहले शतक'' नामक मराठी साहित्य के इतिहास ग्रंथ में उनके नाम या किसी भी कादंबरी का जिक्र तक नहीं है। अन्नाभाऊ साठे के साहित्य पर कई छात्रों ने पीएचडी की है इसके बावजूद शालेय या महाविद्यालयीन अभ्यासक्रम में उनके साहित्य का समावेश नहीं किया गया है। महाराष्ट्र की सरकार ने खुद ही कायम की 'अन्नाभाऊ साठे सरकारी स्मारक समिति' को खुद ही बरखास्त कर दिया था। मध्ययुग में बहुजन–संत तुकाराम के अभंगों (गीतों) की किताबों को ब्राह्मणों ने इंद्रायणी नदी में डुबो दिया था। उसी तरह आधुनिक तुकाराम अन्नाभाऊ को भी ब्राह्मणवादी साहित्यिकों ने उपेक्षित रखा है। लेकिन जागरुक शोषित अवाम की चेतना ने तुकाराम और अन्नाभाऊ दोनों को विस्मृत नहीं होने दिया। (नानासाहेब कठाळे, पी. 4) हम मांग (मातंग, मादिगा) समाज को हजारों सलाम करते हैं जिसने अन्नाभाऊ साठे जैसी इतनी अजीम शख्सियत को जन्म दिया जिसकी साहित्य प्रतिभा के सामने ब्राह्मण–वादी खुद को बौने महसूस करते थे। ऐसे दलित साहित्य के पुरोधा व महान विभूति को शत शत नमन।•

दलित साहित्य से सामाजिक उत्थान

• एल.एन. खोब्रागड़े

समाज का एक वर्ग यदि कई वर्षों से लगातार ऐसे साहित्य का निर्माण करता हो जिससे कि अपने वर्ग की स्वार्थ सिद्धि हो और उनकी श्रेष्ठता झलके तथा सम्पूर्ण समाज की प्रगति में बाधक हो तो समाज के प्रत्येक प्रबुद्ध हितैषी मानव का यह कर्तव्य व अधिकार बनता है कि उसको सही दिशा दे तथा उनके पाखण्ड का भण्डाफोड़ करे।

प्राचीनकाल में लिखे गये धर्म ग्रन्थ साहित्य का बहुत सा अंश न तो तर्क की कसौटी पर सही उतरता है, न ही अन्तर्राष्ट्रीय बन्धुत्व भावना की परिधि में समयानुकूल है। उनके दिये गये गलत विचारों व मान्यताओं को समाप्त करना ही होगा। कथित पवित्र ग्रंथ रामायण में उल्लेख मिलता है कि मर्यादा पुरुषोत्तम कहे जाने वाले राम ने शम्बूक का वध इसलिए किया था क्योंकि शूद्र होकर उसने विद्या प्राप्त करने का और जप–तप करने का दुस्साहस किया था। महाभारत में प्रसंग आता है कि गुरु द्रोणाचार्य ने महान धनुर्धर एकलव्य के हाथ का अंगूठा इसलिए कटवा दिया कि वह शूद्र होकर धनुष विद्या सीख गया था।

उस समय ऐसे धर्म ग्रंथों व साहित्य की रचना की गई थी जिसके तहत शूद्र शिक्षा से वंचित कर दिया जाता था। उसे कीड़े–मकोड़े सा जीवन बिताने को मजबूर कर दिया था। वह अज्ञानता, अशिक्षा के कारण उनकी सेवा करने को विवश था। धर्म ग्रन्थ–वेद, पुराण, भागवत, उपनिषद आदि सभी अधिकांश साहित्य ने दलितों की उपेक्षा ही की थी, जिनका निर्माण धर्म गुरुओं ने अपने सुख, ऐश्वर्य प्राप्त करने के लिए ऐसा विधान रचकर किया जिसमें निहित वर्ण और जाति के सिद्धान्तों ने हिन्दुओं के बीच लाखों दीवारें खड़ी करके एक दूसरे का शत्रु बना दिया। उन्होंने मानव को मानव न कहकर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र कहा। आदर्श धर्म ग्रंथ का नाम देकर भगवान की उत्पत्ति बताया। इनके रचयिता और रचना के नायक पात्र अपनी थोथी आत्म प्रशंसा करते हुए 'जगत गुरु' या 'आध्यात्मिक नायक' या स्वयं ईश्वर का अवतारी बन गये। गीता के रचयिता ने ईश्वर के पूर्ण अवतार श्रीकृष्ण द्वारा स्त्री, शूद्र और वैश्य को 'पाप योनि' वाले घोषित करवाया।

देश को स्वतंत्र हुए 75 वर्ष हो गये हैं, पर फिर भी देश में भेदभाव, असमानता, छुआछूत और दलित विरोधी व्याधि का समुचित उपचार नहीं हो सका है। आज भी देश की करीब 60 प्रतिशत आबादी अशिक्षित है। एक ओर दलित वर्ग व आदिवासियों की शिक्षित संख्या न्यून है, जो शिक्षित हैं, उसमें प्राथमिक शिक्षा की संख्या अधिक है। उच्च शिक्षित संख्या न्यून है।

आज भी संविधान का खुला उल्लंघन हो रहा है और करोड़ों लोग अपने मानवीय अधिकारों से वंचित हैं। यदि हमें अपने देश को महान बनाना है तो अन्य पहलुओं के साथ–साथ ऐसे साहित्य का निर्माण करना होगा जो दलितों को मानोचित सामान्य अधिकारों की उपलब्धि प्रदान कर सके। दलित उत्थान और उससे जुड़ी तमाम तर्कसंगत बातें वर्तमान सामाजिक विकास में अपना अहम् स्थान रखता है जिसमें 'दलित साहित्य' भी एक है।

भारतीय संविधान में मौखिक अधिकारों व नीति निर्देशक तत्वों का प्रतिपादन किया गया है जिसके तहत शिक्षा की समानता का व अन्य सभी अधिकार समान हैं, फिर भी क्या कारण है कि दलितों की आर्थिक दशा निर्धनता की भयानक खाई में डूब चुकी है। इसका कारण है शिक्षा का अभाव, ज्ञान का अभाव, दलितोत्थान प्रचुर साहित्य का अभाव।

भारतीय दलित साहित्य अकादमी ने बहुत हद तक समाज में दलितों को यथोचित सम्मान व न्याय उपलब्ध कराने, सशक्त वैचारिकी प्रदान करने, और स्वस्थ समाज की पुनर्स्थापना कर उनकी सामाजिक अस्मिता बनाये रखने का बीड़ा उठाया है जोकि सम्पूर्ण देश व समाज के उत्थान हेतु दलित वर्ग समाज का उत्थान भी एक आवश्यक कदम है।

देश के टूटन और समाज के विघटन को रोकना है तो सभी को समता, सम्मान और स्वतंत्रता प्रदान करनी होगी। दलितों में से संकीर्णता दूर करके उनमें स्वाभिमान जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य दलित साहित्य ही कर सकता है। हमें उसके निर्माण में भारतीय दलित साहित्य अकादमी का सहयोगी होना चाहिए। •

हिमायती
7 / अगस्त (प्रथम) 2025 (कुल पृष्ठ 8)
आर. एन. आई. नं. 40611/62
प्रकाशन तिथि : 31 जुलाई, 2025

आज का दलित साहित्य आन्दोलन

प्रो. पुरुषोत्तम सत्यप्रेमी

आज हमारे देश में प्रभुत्ववादी सामंतों–ब्राह्मण व्यवस्था, साहित्य–संस्कृति एवं दलित जन साधारण संस्कृति–साहित्य–जीवन मूल्य आमने–सामने सीधी टकराव की स्थिति में है और परिवर्तन विरोधी एवं परिवर्तन का भी शक्तियों का ध्रुवीकरण तेजी से हो रहा है। व्यवस्था एवं संस्कृति के क्षेत्र में चारों तरफ संकट का अंधेरा दिन–प्रतिदिन अधिक सघन होता जा रहा है। विघटनकारी तत्वों की गतिविधियां तथा सामान्य जन दलितों के दमन की कार्यवाहियां तेज होती जा रही हैं। आज समानता, स्वतन्त्रता और धर्मनिरपेक्षता की मनमानी ताकतें अपना प्रभुत्व बनाये रखने वाली व्याख्याएं कर और तदानुसार आचरण कर धर्मान्धता, अस्पृश्यता, गरीबी, शोषण, अनाचार, अराजकता और हिंसा को ही कारगर ढंग से प्रतिष्ठित किया जा रहा है। इन स्थितियों में दलित सामान्य जन के बुद्धिजीवियों, रचनाकारों तथा सांस्कृतिक कमियों का अपना एकता सुनिश्चित करने के लिए दलित क्रांति आन्दोलन एवं साहित्य का विशेष महत्व ग्रहण करना अनिवार्य ही नहीं, स्वाभाविक है।

संगठन के महत्व को प्रतिपादित करते हुए प्रख्यात साहित्यकार भीष्म साहनी ने कहा–''इस तरह के संगठन अपने समाज के अन्तःकरण की भूमिका निभाते हैं। वह न केवल समाज में मानवीय मूल्यों की स्थापना के प्रति हमें सचेत करते हैं, बल्कि हमें वांछित सामाजिक परिवर्तन का दिशा–निर्देश भी करते हैं, भविष्य के लिए संघर्ष करने की प्रेरणा भी देते हैं।''

अखिल भारतीय प्रगतिशील लेखक महासंघ के संदर्भ में व्यक्त ये विचार हमारे भारतीय दलित साहित्य संगठन के लिए भी नीति निर्देशक है। हमारा संगठनात्मक लेखन प्रभुत्ववादी ब्राह्मण साहित्य–संस्कृति के विरुद्ध सशक्त रचनात्मक हस्तक्षेप एक आन्दोलन है, जिसके रचनाकारों की अभिव्यक्ति अधिक सशक्त, तीखी एवं प्रभावी हुई है।

आज का दलित साहित्य दलित जन–साधारण की ताजा मनःस्थिति को बहुत ही बेबाक और स्पष्ट तौर पर उजागर करता है। दलित साहित्यकार जानता है कि मनुष्य की जाति उत्पत्ति के क्षेत्र में ऊंट–पटांग परिकल्पनाओं के आधार पर गढ़ा गया मानव जातियों प्रजातियों की असमानता और पृथकता का सिद्धान्त शोषण प्रणाली के सबसे अधिक विनाशकारी हथियारों में से एक है। मानव जाति को सवर्ण और अवर्ण या ऊंचे और नीचे हिस्सों में बांटकर कुछ जातियों को दूसरी जातियों का दमन करने और दास बनाने के नैगर्सिक अधिकारों की वकालत करने वाले इस विज्ञान विरोधी मन गढ़न्त सिद्धान्त का उद्देश्य सामाजिक समानता को न्यायोचित सिद्ध करना रहा है।

इसका प्रारम्भ मनु की 'मनुस्मृति' के रचनाकाल से हुआ था। जब ब्राह्मणवाद बिना किसी योग्यता व क्षमता के भी अपना 'बड़प्पन' व 'श्रेष्ठता' को अक्षुण रखते हुए सामन्तवादी पूंजी–व्यवस्था के लिए रास्ता तैयार कर रहा था, तब ब्राह्मण, राजपूत और वैश्य जातियां अपनी श्रेष्ठता के दंभ में दूसरी जातियों, उनकी जर, जारू और जमीन पर प्रभुत्व स्थापित कर रही थी। इसके लिए शास्त्र और शस्त्र का प्रयोग किया गया और राजपूत, राजा, ब्राह्मण मंत्री और वैश्य कोषपाल बनते रहे। परन्तु पिछले पचास वर्षों में एक परिवर्तन हुआ है, सवर्ण का ऊंची जातियों द्वारा अस्पृश्यता और जाति भेद के सिद्धान्त पर किये गये नृशंस उत्पीड़न और शोषण के खिलाफ आज का दलित या अवर्ण भारतीय महज एक कमजोर, असहाय और मूक दर्शक नहीं रह गया है। वह जानता है कि पिछली तीन–चार शताब्दियों में सामन्ती ब्राह्मणवादियों ने जातिगत शुद्धता के नाम पर धर्म की आड़ में जो अत्याचार किये थे बीसवीं शताब्दी में मानवतावाद, समाजवाद और साम्यवाद की सारी दुहाई के बावजूद खत्म नहीं हुए, बल्कि उनका स्वरूप बदला है।

आज सामंती ब्राह्मणवाद दलित जातियों को बौद्धिक, आर्थिक और सामाजिक रूप से निरन्तर कमजोर बनाए रखने के लिए नई–नई शतरंगी चालें चल रहा है। आत्मदाह, साधू–संगठन, राम–चरितमानस प्रसंग और भागवत पारायण–प्रवचन, नित नये मन्दिरों के निर्माण और भजन– कीर्तन आदि के रूप में जाति–पांति व अस्पृश्यता को कायम रखने तथा आर्थिक व सामाजिक क्षेत्रों में दलित जनता के दमन और उत्पीड़न के सुनियोजित षड्यंत्र चल रहे हैं।

भारत के दलित क्रान्तिकारी साहित्यकारों का दलित लेखन जातीय श्रेष्ठता की आड़ में होने वाले उत्पीड़न और इस कुचक्र से बाहर आने को आतुर संवेदनशील मन का लेखन है। यह लेखन निरे गुस्से और आवेश का लेखन नहीं है। यह लेखन उन क्षेत्रों में घुसता है जहां जातिगत–धर्मगत उत्पीड़न लगातार अपना रूप परिवर्तित कर मनुष्य के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक शोषण के सन्दर्भों को सामने लाते हैं और इसी लिए इस लेखन की प्रक्रिया बहुत सीधी, सपाट न होकर जटिल और अनेकार्थी भी है। आज का दलित

साहित्य सामाजिक विसंगतियों को उनकी अनेक तहों के साथ पकड़ना चाहता है।

अपने संवेदनात्मक घनेपन का यह दलित लेखन दुरूह लेखन नहीं है, क्योंकि यह अपनी धरती पर सदियों से शोषित–पीड़ित–पददलित बेजुबान आदमी की आवाज बन जाना चाहता है। सामाजिक जीवन में सहभागी होने के कारण आज का दलित लेखन एक पूरे समुदाय की उम्मीद, नाउम्मीद, डर, प्रेम, नफरत, आशंका, संघर्ष, पराजय, घुटन और आस्था से भरी हुई स्वतन्त्र भारत के लोकतंत्रीय शासन प्रणाली के नागरिक अधिकारों का लेखन है। बहुत गहरे यह लेखन सम्पूर्ण सामाजिक प्रक्रिया का एक हिस्सा होकर भारत के दलित समाज के मनुष्य की एक अलग सांस्कृतिक पहचान बताता है। एक ऐसी पहचान जिसे सामन्तवादी ब्राह्मण समुदाय अपने हरसंभव तरीके से धुंधला देना चाहता है। क्योंकि सोमदत्त के शब्दों में, कोई भी ऐसी रचना जो सामाजिक अन्याय, मानवीय यातनाओं शोषण, संघर्ष और बेहतर जीवन जीने की हर ऐरे गैरे नत्थू खैरे की इच्छा से साहित्यकार को बांधती है और अपने पाठक को उन शक्तियों का चेहरा दिखाती है जो अन्याय और दमन की जड़ में है, खतरनाक होती है।'

दलित साहित्य को परिभाषित करते हुए भारतीय दलित साहित्य अकादमी के अध्यक्ष डा. सोहनपाल सुमनाक्षर ने लिखा–''दलित साहित्य–दलितोत्थान–साहित्य यानि वह साहित्य जो दलितों, पीड़ितों, शोषितों, उपेक्षितों और असहाय वर्ग को उत्थान और नवविकास के लिए प्रेरित करता है, जो ऐसे व्यक्तियों को उनके गौरवमयी इतिहास से परिचित कराते हुए उनको उनकी मानवीयता की पहचान से अवगत कराता है। यह वह साहित्य है जो धरती से जुड़े लोगों को उनकी समस्या और दुर्दशा से अवगत कराते हुए उनकी निराकरण और समाधान के उपाय बताता है। सुमनाक्षर के अनुसार 'दलित साहित्य एक ऐसा साहित्य है जो सभी तरह की वर्णव्यवस्था, जात–पांत, ऊंच–नीच, भेदभाव के दायरे से ऊपर है और जिसे धर्म, भाषा और प्रदेश की सीमाओं में नहीं बांधा जा सकता। यह समाज के सर्वहारा वर्ग के समान निश्छल और सरल है। इसे अपने उद्देश्य पूर्ति के लिए किसी छंद, अलंकार आदि की आवश्यकता नहीं। दलन की वेदना, शोषण की कुढ़न, अन्याय का उत्पीड़न और अत्याचार का रुदन, अपमान की पीड़ा–अभिव्यक्ति भाषा और अलंकार नहीं देखती।

इतना ही नहीं दलित साहित्य व्यक्ति को भीरू, अकर्मण्य तथा धर्मान्ध के स्थान पर जुझारू, संघर्षशील और कर्त्तव्यपरायण बनाता है। यह उनमें स्वाभिमान, आत्म–गौरव जगाकर और आडम्बरों से दूर रहकर जनसाधारण से सीधा जुड़ा है।

इस प्रकार के साहित्य को ही वास्तविक साहित्य मानते हुए डा. सोहनपाल सुमनाक्षर आगे लिखते हैं–''वास्तव में दलित साहित्य ही वास्तविक साहित्य है जो मेहनतकश–धरती के बेटों से जुड़ा है, जो उनकी पीड़ा में कराह उठता है, उनके दुःख में व्यथित हो उठता है और उनकी खुशियों में उनके साथ मिलकर झूम उठता है, रसिया, चौपाला, आल्हा और मल्हार गाता है। वह शब्द–जाल, अलंकार और व्याकरण से कोसों दूर धरती से जुड़े लोगों की तरह निश्छल, सादा और शांत है, पर अत्याचारी, अन्यायी और शोषकों से टकराहट होने पर आग उगलता है, और असमानता अन्याय मिटाने के लिए उन्हें धरती से आत्मसात करने की उद्घोषणा करता है।

ऐसे सभी साहित्यकार जो दलितोत्थान के लिए दलित साहित्य की रचना करते हैं, वे बिना किसी भेद–भाव (वर्ग– धर्म, भाव) के 'दलित साहित्यकार' कहे जा सकते हैं। चित्रकारी, शिल्पकारी, रंगमंच, चलचित्र के माध्यम से दलितोत्थान में जुड़े सभी कलाकार 'दलित कलाकार' कहे जा सकते हैं।'

अतः हमारी दृष्टि में दलित साहित्य से तात्पर्य उस साहित्य से है जो सम्पूर्ण भारतीय मानव समाज को बिना किसी भेदभाव, छुआछूत, छल–छदम्, दुत्कार–फटकार, अत्याचार–अनाचार, ऊंच नीच के आगे बढ़ाता है, और सम्पूर्ण मनुष्य समाज और मनुष्य के सर्वांगीण विकास में सहायक होता है।

वस्तुतः जिस साहित्य में लोकहित की भावना हो ब्राह्मणवादी साहित्य–संस्कृति तथा मृतप्रायः परम्पराओं–रूढ़ियों और ह्रासशील तत्वों–निष्क्रियता, अकर्मण्यता व अन्धविश्वासों का विरोध हो, समानता, स्वतन्त्रता और संगठित संघर्ष की उचित रूप में स्वीकृति हो और बुद्धि की कसौटी पर कस कर वैज्ञानिक ढंग से सामाजिक विकास का आग्रह हो, जो भारतीयों को कर्मण्य बनाकर समुचित निर्माण में सहायक हो और प्राचीन अर्वाचीन अन्धकार पटल को चीरकर क्रान्ति दृष्टि से विद्रोह की भूमिका का निर्वाह करता हो, वह दलित–साहित्य है। यह खास तौर से सन् उन्नीस सौ साठ के बाद लिखा हुआ वह साहित्य है, जिसे दलित समुदाय के लोगों में से आने वाले लेखकों ने लिखा। •

हिमायती
हिन्दी पाक्षिक पत्र
पढ़ें और आगे बढ़ें।

स्वामी, सम्पादक/ प्रकाशक एवं मुद्रक डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर द्वारा वन्दना आफसेट प्रिन्टर्स, A-9 सराय पीपलथला एक्सटेंशन, दिल्ली-33 में मुद्रित तथा रजि. कार्यालय : 233 टैगोर पार्क, माडल टाउन, दिल्ली-9 से प्रकाशित। □ *सह सम्पादक एवं व्यवस्थापक - जय सुमनाक्षर, मो. 9810278936* **Email-sumanakshar@ymail.com**
नोट : हिमायती में प्रकाशित रचनाओं के लिए सम्पादक की सहमति जरूरी नहीं। हिमायती से सम्बन्धित किसी भी कानूनी कार्रवाई का क्षेत्र दिल्ली न्यायालय तक ही सीमित है।
सम्पादकीय कार्यालय : बी 3/9, दूसरी मंजिल, माडल टाउन-1, दिल्ली-110009